NYAYA - BANDAGE AND LIBERATION

न्याय -बन्धन एवम मोक्ष विचार

By- Dr. Arun Kumar Sinha
Asso. Professor, Philosophy Department
Raja Singh College, Siwan
(For Part- 1 Hons./Subs. Students)

न्याय दर्शन के अनुसार आत्मा ,मन और शरीर से भिन्न है लेकिन अज्ञानतावस वह इससे भिन्न नहीं समझता और वह मन और शरीर को अपना अंग समझने लगता है।इन विषयों के साथ वह तादातम्य स्थापित कर लेता है।यही बन्धन की अवस्था है।बन्धन की अवस्था में मानव के मन में गलत धारणायें निवास करने लगती हैं।इस अवस्था में आत्मा को बार बार जन्म ग्रहण करना पड़ता है और सांसारिक दु:खों को झेलना पड़ता है।इससे छुटकारा पाना ही मोक्ष कहलाता है।इस तरह बन्धन का अन्त ही मोक्ष है।

आत्मा का यथार्थ ज्ञान मोक्ष प्राप्ति का साधन है। इससे अज्ञान का नाश होता है ।अज्ञान के नाश से दोष का क्षय होता है ।दोषों के क्षय से कर्मों का क्षय होता है और कर्मों के क्षय से पुनर्जन्म नहीं होता ।पुनर्जन्म के न होने से दुखों का नाश हो जाता है ।दुखों के नाश का नाम ही मोक्ष है ।शरीर को आत्मा समझना ही मिथ्या ज्ञान है और यही अहंकार है ।आत्मा के तत्व ज्ञान से इस अहंकार का नाश हो जाता है ।इससे मोह का और मोह से पैदा होने वाले राग और द्वेष का नाश हो जाता है।

नैयायिकों के अनुसार मोक्ष दु:ख के पूर्ण निरोध की अवस्था है।वे इसे अपवर्ग कहते हैं।अपवर्ग का तात्पर्य है शरीर और इन्द्रियों के बन्धनों से आत्मा का विमुक्त हो जाना ।मोक्ष एक ऐसी अवस्था है जिसमें आत्मा के केवल दुखों का ही अंत नहीं होता बल्कि उसके सुखों का भी अंत हो जाता है ।मोक्ष की अवस्था को आनंदविहीन माना गया है। आनंद सर्वदा दुख से मिले रहते हैं। दुख के अभाव में आनंद का भी नाश हो जाता है ।कुछ न्यायिक ऐसा मानते हैं कि आनंद की प्राप्ति शरीर के माध्यम से होती है। मोक्ष में शरीर का नाश हो जाने से आनंद का भी अभाव हो जाता है ।इससे प्रमाणित होता है कि मोक्ष में आत्मा अपनी स्वभाविक अवस्था में आ जाती है ।वह सुख दुख से शून्य होकर बिल्कुल अचेतन हो जाती है। किसी प्रकार की अनुभूति उसमें शेष नहीं रह जाती है ।यह आत्मा की चरम अवस्था है । इसका वर्णन धर्म ग्रंथों में अभयम,अजरम, अमृत्युपदम इत्यादि नामों में हुआ है।

अज्ञान बंधन का मूल कारण माना गया है अज्ञान का नाश तत्वज्ञान के द्वारा ही

संभव है ।तत्वज्ञान होने पर मिथ्या ज्ञान स्वयं निवृत हो जाता है जैसे रज्जू के ज्ञान से सर्प का ज्ञान स्वयं निवृत्त होता है ।

मोक्ष या अपवर्ग पाने के लिए न्याय दर्शन में श्रवण ,मनन और निदिध्यासनपर जोर दिया गया है। सबसे पहले धर्म ग्रंथों के आत्म -विषयक उपदेशों को श्रवण करना चाहिए तब मनन के द्वारा आत्म- विषयक ज्ञान को सुदृढ़ बनाना चाहिए और तब निदिध्यासन के द्वारा अर्थात प्रयोग की बतलाए गए मार्ग के अनुसार आत्मा का निरंतर ध्यान करना चाहिए । इनसे यह लाभ होता है कि मनुष्य आत्मा को शरीर से भिन्न समझने लगता है तब उसके इस मिथ्या ज्ञान का कि 'मैं शरीर और मन हूं'का अंत हो जाता है और तब वह वासनाओं और प्रवृत्तियों से परिचालित नहीं होता ।इस तरह जब मनुष्य वासनाओं और प्रवृत्तियों से मुक्त हो जाता है तो उसके वर्तमान कर्मों का उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि तब तो वह कोई भी कर्म बिल्कुल निष्काम भाव से करता है अपने संचित कर्मों का फल भोग लेने पर फिर वह जन्म ग्रहण के चक्र में नहीं पड़ता और इस तरह पुनर्जन्म का अंत हो जाने पर शरीर के बंधनों का और साथ-साथ दुखों का भी अंत हो जाता है यही मोक्ष या अपवर्ग है।

न्याय दर्शन के मोक्ष विचार का कुछ आलोचना भी हुआ है जो निम्न प्रकार से है : -

बेदान्तियों ने न्याय के मोक्ष सम्बन्धी विचार की आलोचना यह कह कर की है कि यहाँ आत्मा पत्थर के सामान हो जाती है।मोक्ष का आदर्श उत्साहवर्धक नहीं रहता।ऐसे मोक्ष को अपनाने के लिये प्रयत्नशील जिसमें आत्मा पत्थर के समान हो जाती है बुद्धिमता नहीं है। चार्वाक का कहना है कि पत्थर की तरह बन जाने की अभिलाषा गौतम जैसे आले दर्जे का मूर्ख ही कर सकता है।

एक वैष्णव विचारक न्याय की मोक्ष विचार की आलोचना करते हुए कहते हैं कि न्याय दर्शन में जिस प्रकार की मुक्ति की कल्पना की गई है उससे प्राप्त करने से अच्छा तो यह है कि हम सियार बनकर बृंदाबन के जंगल में विचरण करें।

न्याय मोक्ष को आनंद से शून्य मानता है उनका ऐसा मानना है कि आनंद दुःख से मिश्रित रहता है और दुःख के अभाव में आनंद का भी अभाव हो जाता है परंतु नैयायिक यहां इस बात को भूल जाते हैं कि आनंद सुख से भिन्न है ।मोक्ष में जिस आनंद की प्राप्ति होती है वह सांसारिक दुख और सुख से परे है। अतः मोक्ष को आनंदमय मानना भ्रामक नहीं है। नव्य-नैयायिकों ने बाद में चलकर मोक्ष को एक आनंद की अवस्था माना है।